महाकवि भारवि के काव्य का साहित्यक वैशिष्ट्य

मोन्टी कुमार NET M.A (आचार्य)

जगदगुरू रामानन्दाचार्य
संस्कृत विश्वविद्यालय, जयपुर

संस्कृत की इस विकसित महाकाव्य परम्परा का सफल प्रतिनिधित्व हमें कालिदास और अश्वघोष के बाद भारवि की कृति में मिलता है। भारवि की कवित्वकीर्ति को अक्षुष्ण बनाये रखने वाला उनका एकमात्र ग्रन्थं ''किरातार्जुनीयं'' है। जिसकी गणना संस्कृत की बृहत्त्रयी (किरात, माघ, नैषध) में की गई है। भारवि का यह महाकाव्य अपना अलग स्थान रखता है। इस महाग्रन्थ में काव्यशास्त्रोक्त नियमों का पूर्णतया निर्वाह हुआ है। भारवि का व्यक्तित्व दर्शन सर्वथा स्वतंत्र प्रतीत होता है। इसका बड़ा भारी कारण यह है कि भारवि ने वीर रस का बड़ा ही हृदश्ग्राही चित्रण औश्र अंलकृत काव्यशैली का सफल वर्णन किया है। **''अर्थ गौरव''** भारवि की सबसे बड़ी विशेषता है।

भारवि मुख्य रूप से कलावादी कवि है। जिनका ध्यान काव्य के बहिरङ्ग पर अधिक रहा है। अर्थपक्ष में गम्भीरता तथा सार्वजनीकता का निवेश भी उन्होनें किया है। चित्रकाव्य का प्रयोग करने वाले वे प्रथम संस्कृत कवि है। कृत्रिम भाषा का प्रयोग करते हुए उन्होनें यह प्रकट किया है कि संस्कृत काव्य कितना दुरूह हो सकता है। किन्तु ऐसी शब्द क्रीडा उनके काव्य में सीमित है। भारवि वैदर्भी रीति के कवि है। जिसमें अल्पसमासों का प्रयोग होता है। पाण्डित्य प्रदर्शन की प्रवृति भी भारवि में बहुत अधिक है। इस समस्त कृत्रिमता के मध्य उनमें भावों को अभिव्यक्त करने की अद्भुत क्षमता है। जो सामान्य स्थलों में विपुल रूप से प्राप्त होती है। भावों के अनुसार उन्होनें काव्य कला का प्रयोग किया है।

अर्थगौरव से पूर्ण सामान्य उक्तियों से प्रासाद गुण है तो चित्रात्मक वर्णनों में ओजगुण के प्रयोग में भी कवि को संकोच नहीं है। उनके अलंकारो और छन्दों का निवेश भी कवि ने भावों की आवश्यकता के अनुरूप ही किया है। इनकी शैली के विषय में जितना अन्य विद्वानों ने कहा है उससे न्यूनतर स्वयं भारवि ने नहीं कहा। इससे प्रकट होता है कि कवि अपनी भाषा शैली के प्रति पूर्ण जागरूक है।

भारवि के विषय में कुछ उक्तियॉ प्रचलित है। जैसे

भारवेरर्थगौरवम्, भारवेरिव भारवेः प्रकृति मधुरा भारविगिरः (अभिनन्द),

नारकेलफलसम्मित वचो भारवेः (मल्लिनाथ) इत्यादि।

भारवि की शैली की स्वाभाविक मधुरता के अतिरिक्त बाह्य रूक्षता तथा अन्तः सरसता एवं अर्थगौरव की प्रशंसा की गयी है। स्वयं भारवि ने अपने काव्य के विविध प्रसङ्गो में वचोविन्यास के विशिष्ट गुणों का निर्देश किया है।

स्फटता न पदैपपाकृता न च न स्वीकृतमर्थगौरवम्।

रचिता पृथगर्थता गिरां न च सामर्थ्यमपोहितं क्वचित।।[1]।।

(किरात 2/27)

यहॉ भीम वाणी की प्रशंसा में युधिष्ठिर कहते है। कि तुम्हारे अतिरिक्त अन्य कौन है। जिसके शब्दों में स्फुटता (स्पष्टता) हो, अर्थ गौरव विघमान हो, बातों में पृथगर्थता हो और शब्दों की परस्पर आकाक्षां (सामर्थ्य) भी उपस्थित हो। भाषा के इन गुणों का भारवि ने उपदेश ही नहीं दिया है। पालन भी किया है।

विविक्त वर्णा भरणा सुखश्रुतिः प्रसादयन्ती हृदयान्यपि द्विषाम्।

प्रवर्तते नाकृत पुण्यकर्मणां प्रसन्नभीरपदा सरस्वती।।[2]।।

(किरात 24/3)

यहॉ अर्जुन किरात वेशधारी शिव से कहते है कि परस्पर असंकीर्ण वर्णो के आभूषण से युक्त सुनने में सुखद शत्रुओं के मन को भी प्रसन्न करने वाली तथा प्रसाद गुण एवं अर्धगाम्भीर्य से युक्त वाणी पुण्यकर्म के बिना प्रवृत नहीं होती। काव्य में भी ऐसी भाषा शैली वाञछनीय है। इसी क्रम में अर्जुन आगे भी कहते है।

स्तुवन्ति गुर्वीमभिधेयसम्पदं विशुद्धिमुक्तेरपरे विपश्चितः।

इति स्थितायां प्रति पुरूषं रूचौ सुदुर्लभाः सर्वमनोरमा गिरः।।

कुछ लोग वाणी की वाच्यार्थ सम्पत्ति की प्रशंसा करे है। तो दूसरे विद्वान केवल उक्ति की प्रशंसा करे है। इस प्रकार प्रत्येक व्यक्ति के पृथक–पृथक विचारों की स्थिति में सभी लोगों को प्रसन्न करने वाली अत्यन्त दुर्लभ होती है। भारवि ने ऐसी ही वाणी को काव्य का उत्कर्ष समझा है।

भारवि की काव्यशैली सामान्यतः वैदर्भी है। जिसमें समास साहित्य या अल्पसमासता रही है किन्तु कालिदास की शैली के समास कोमलता, पदलालित्य और परिष्कार का इसमें अभाव है। पाण्डित्य और कवित्व दोनों के प्रति समान आकर्षण के कारण भारवि भावों के सौन्दर्य पर तो ध्यान रखते है। किन्तु शब्दों की मधुरता का बलिदान इनके पाण्डित्य के निकषोपल पर हो जाता है। राजनीति जैसा शुष्क विषय हो या शरद वर्णन जैसा सरस विषय आये, भारवि की भाषा शैली रूक्षता नहीं छोड़ती। यही कारण है कि मल्लिनाथ ने इनकी वाणी को **''नारिकेल फसम्मित''** कहा है।

किरातार्जुनीय के चतुर्थ सर्ग में शरद ऋतु का भव्य वर्णन करते हुए इसी शैली में कवि ने कतिपय सुन्दर शब्दचित्र अङ्कित किये है। वर्षा के कारण जो मार्ग पहले टेढ़े–मेढ़े थे, अब शरद् में खेता का लू सूख जाने से सीधे हो गये, उन मार्गो पर समीपवर्ती पौधों का बैल खा गये है। गाड़ियो के पहियो के चिन्ह (लीक) बन जाने से कहीं–कहीं उन मार्गो पर कीचड़ घनी हो गयी है और लोगों के निरन्तर आने–जाने से अब वे मार्ग स्पष्ट दिखायी पड़ रहे है।

पपात पूर्वा जहतो विजिह्मतां वृषोपभुक्तान्तिकसस्य सम्पदः।

रथाङ् सीमन्तित सान्द्रकर्दमान् प्रसक्त सम्पाद – पृथक्कृतान्पथः।।[3]।।

(किरात 4/28)

उत्फुल्ल स्थल नलिनी वनादमुष्म दुद्धतः सरसिज सम्भवः परागः

वात्याभिर्वियति विवतितः समन्ता दाधते कनकमयातपत्रक्ष्मीम्।।[4]।।

(किरात 5/39)

इस उपमान के कारण कवि को आतपत्र भारवि भी कहा गया है।

अर्थ गौरव (भारवेरर्थ गौरवम्) भारवि की शास्त्रगत व्युत्पति के अतिरिक्त लोकानुभव का प्रकृष्ट परिचय उनकी सूक्तियों में प्राप्त होता है। उनके सुभाषित शास्त्रों के पाण्डित्य से मण्डित तथा व्यापक अनुभूतियों से समन्वित है। उनमें नीति, राजनीति तथा सामान्य जीवन से सम्बद्ध सूक्तियों का भाण्डागार है। इन सभी में अर्थान्तरन्यास अलंकार निहित है। अर्थगौरव वह काव्यगुण है। जिसमें अल्पतम शब्दों में व्यापक अर्थ को प्रकाशित करने की क्षमता प्रकट हो। भारवि की सूक्तियों में यह गुण प्रचुर परिणाम में विद्यमान है।

यहॉ कुछ सामान्य सूक्तियों के उद्धरण दिये जाते है।

1. हितं मनोहारि च दुर्लभं वचः (1/4)

   ऐसी वाणी दुलर्भ है। जो हितकर होने के साथ मन के अनुकूल भी हो।

2. समुन्नयन् भूतिमनार्यसंगमाद् वरं विरोधेऽपि समं महात्मभिः। (1/8)

   नीचो की संगति की अपेक्षा बड़े लोगों से विरोध कहीं अच्छा है क्योंकि उससे ऐश्वर्य की सिद्धि होती है।

3. अहो दुरन्ता बलवद् विरोधिता (1/23)

बलवान् व्यक्तियों से विरोध करने पर अन्त तो कष्टकर होगा ही।

4. सहसा विदधीत न क्रियाम् (2/30)

बिना विचारे अर्थात अकस्मात कोई काम नहीं करना चाहिए।

रसाभिव्यक्ति – महाकवि भारवि ने अपने भवेदंगी श्रृंगार वीर रस को अंगीरूप में अभिव्यक्ति किया हे। वीर रस प्रधान होते हुए भी उनके महाकाव्य में अन्य रसों का भी यथास्थान अंगरूप में चित्रण हुआ है। इनमें भी श्रृंगार रस ही मुख्यतः देखा जाता है। भारवि के टीकाकार मल्लिनाथ ने भी किरातर्जुनीयम् में प्रधान रस वीर ही स्वीकार किया है। **"श्रृंगारादि रसोऽगमत्र विजयी वीरः प्रसादो रसः।"**

सन्दर्भ सूची :–

किरार्जुनीयम् कवि भारवि

1. स्फटता न..... (किरात 2/27)
2. विविक्तवर्णा..... (किरात 3/24)
3. स्तुवन्ति..... (किरात 14/8)
4. पपात पूर्वा..... (किरात 4/18)
5. उत्फुल स्थल..... (किरात 5/39)